महावीर
का
साम्यवाद

परिपूर्णानन्द वर्मा

आजकल साम्यवाद की बड़ी चर्चा है और बहुत से लोग जानना चाहते हैं कि महावीर का मत इस विषय में क्या है। साम्यवाद के लिये "सोशलिज्म" शब्द सबसे पहले सन् 1838 में फ्रांस के पियर लूरे ने गढ़ा था। इसका सक्रिय रूप बनाने में 18-19 वीं सदी में सेंट साइमन, टाम पेन, विलियन गोडविन और विलियन गौडविन ने भूमिका तैयार की थी। फ्रांस के फूटियर तथा इंग्लैंड के रौबर्ट औवेन ने इसकी रूप रेखा तैयार की पर इसका वास्तविक रूप कार्लमार्क्स तथा फ्रीडरिश एंजीला के सन् 1848 की विज्ञप्ति में प्रकट हुआ। इसी को, इसी साम्यवाद को "कम्यूनिज्म" कहते हैं। चूँकि कम्यूनिज्म में ईश्वर को कोई स्थान नहीं है इसीलिये कुछ लोगों का विचार है कि जैन साम्यवाद के अधिक निकट हैं। पर इसी विदेशी साम्यवाद के लिये जर्मन कवि हीनरिश हीन (1797-1856) ने लिखा था कि "यह भूख ईर्ष्या तथा मृत्यु का दूत है।" आज की स्थिति में यह बात सत्य से दूर नहीं है। एक अमेरिकन पादरी एफ. डी. हटिंगटन (1819-1904) ने लिखा था कि "साम्यवाद स्वतंत्रता तथा समानता के लिये अंधी भूख है।" एबनेजेर इलियट (1781-1849) नामक ब्रिटिश कवि ने इसे "अपना एक पैसा देकर आपका एक रुपया छीनने वाला" वाद कहा था। आजकल लोग क्या कहते हैं, यह हम देना नहीं चाहते। राजनीति पर हम नहीं लिख रहे हैं।

महावीर का साम्यवाद इन सभी दोषों से मुक्त है। जब वे कहते हैं कि हर एक में प्राण हैं, जीव है, किसी को कष्ट न दो, सबको अपने समान समझो, "जीओ और जीने दो", "धन का संचय मत करो", "अपरिग्रह धारण करो", "धन देने के लिये है", सम्मृद्धि का अभिमान छोड़ दो, दान करो, अपना धन बांट दो, मन बचन या कर्म से भी न किसी का कुछ अपहरण करो, न कष्ट पहुँचाओ, तब साम्यवाद में और क्या बाकी रहा। दूसरे की सम्पत्ति छीनना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अस्थायी साम्यवाद है। हिंसक साम्यवाद है। अपनी सम्पत्ति दूसरों में बाँटकर उपयोग करना अहिंसक साम्यवाद है। महावीर कहते हैं :—

जहाँ लाहो तहाँ लोहो लाहा लोहो पवडढई।
दो मासकंय कज्जं कोडीए वि न निट्ठियं ॥

जैसे लाभ होता है वैसे लोभ होता है, लाभ से लोभ बढ़ता है। दो माशे सोने से पूरा होने वाला काम करोड़ से भी पूरा नहीं हुआ।

वे कहते हैं :—

सुवण्ण रूप्पस्स तु पव्वया भवे,
सिया हु कैलास सभा असंख्या।
नरस्स लुद्धस्स न तेहिं किंचि,
इच्छा उ आगास सभा अणन्तिया॥

कदाचित् सोने और चाँदी के कैलाश पर्वत के समान असंख्य पर्वत हो जायें तो भी लोभी पुरुष को उनसे कुछ भी नहीं होता, क्योंकि इच्छा आकाश के समान अनन्त है।

पुनः कहा है :—

"धणेण किं धम्मधुराहिगारे।"
धन से धर्म की गाढ़ी कब चलती है।
"न ए नित्तासए परम।"
दूसरों को त्रस्त मत करो।

महावीर के अनुसार :—

सले कामी विसे कामा आसी विसोवमा।
कामे पत्थेमाणा अकामा जन्ति दो गई।

"काम भोग शल्य हैं, विष हैं और आशी विष सर्प के तुल्य है। काम-भोग की इच्छा करने वाले, उनका सेवन न करते हुए भी दुर्गति को प्राप्त करते हैं।"

जिस धर्म में केवल अपने आपको जीतना सबसे बड़ी विजय हो, वह वास्तविक साम्यवादी धर्म है। आज के लौकिक साम्यवाद से न कहीं सुख है, न कहीं शान्ति, केवल अशान्ति का एक हाहाकार मचा हुआ है। वह साम्यवाद संघर्षवाद बन गया है। अहिंसा और स्याद्वाद में श्रद्धा रखने वाला अपहरणकर्ता नहीं हो सकता। भगवत् गीता में वर्णित समत्व की भावना तथा भगवान महावीर का समभाव ही असली साम्यवाद है।

महावीर ने कितना सुन्दर बचन कहा है :—

निम्ममो निरहंकारो निस्संगो चत्तगारवो।
समोयो सब भूएसु तसेसु थावरेसु य॥

"ममत्व रहित, अहंकार रहित, निर्लेप गौरव को त्यागने वाला, त्रस और स्थावर सभी जीवों में समभाव रखने वाला मुनि होता है।"

युग का वरदान

जैन धर्म के मनोयोग, बचनयोग तथा काययोग के सिद्धान्त को कोई नहीं काट सकता, हठयोग की कोई भी क्रिया बिना इन तीन के पूरी नहीं हो सकती। जीव में दो प्रकान के भोग होते हैं—अभिसंधिभोग—जिसमें वह अपने से काम करता है जैसे चलना, उठना, काम करना, तथा दूसरा है अनुभिसंधि योग जो कार्य निद्रा, ध्यान, चिन्तन के समय होता रहता है। जीव का यही चैतन्यत्व है। जीव अजीव का संभोग, जीव पुद्गल तथा पर्याय के सिद्धान्त, पदार्थ द्वारा कर्म बंधन इनको वैज्ञानिक रूप से भी जिसने समझने की चेष्टा की, वह इस "सत्य" की गरिमा को स्वीकार करेगा, चाहे वह किसी धर्म के सम्बन्ध में भी विवेचन करे। जैन दर्शन ने दुष्कर्म का विचार उठाना भी पाप और बन्धन का कारण बतलाया है। आज का न्याय शास्त्र "विचार या नीयत" पर बहुत जोर देता है। बौद्ध धर्म में "गुप्त गुण" कहा गया है जिसमें कि मनुष्य बिना किसी की जानकारी के सद्विचार रखता है और उसका पालन करता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन धर्म के सदाचार में सद्विचार परम आवश्यक है। महावीर ने पर्याय की, द्रव्य की पुद्गल की जो व्याख्या की है तथा जीव-अजीव, जीव तथा पदार्थ की जिस मिलीजुली सत्ता का विवेचन किया है, उसी को दूसरे शब्दों में तपस्वी अरविन्द घोष ने भी स्वीकार किया है।

जैन धर्म की प्राचीनता के बारे में अब कोई विवाद भी नहीं रहा। जैकोबी के अनुसार पार्श्व ऐतिहासिक सत्य हैं। लेखक कीथ के अनुसार पार्श्व का जन्म ईसा-पूर्व 740 में हुआ था। जैन महापुराण (उत्तर पुराण, पर्व 74, पृष्ठ 462) के अनुसार पार्श्व महावीर के पूर्व 23वें तीर्थंकर थे। पार्श्व के शिष्य श्री कुमार ने महावीर के पिता को जैन धर्म की दीक्षा दी थी। डा. बाथम ने पार्श्व द्वारा जैन धर्म के प्रचार का वर्णन किया है। डा. ग्लैसेनेप ने अपने ग्रंथ में लिखा है कि बौद्ध धर्म के बहुत पहले से जैन धर्म भारत में प्रचलित था।

महावीर ने पुरानी श्रमण परम्परा को और जागरूक और परिपक्व किया है। डा. अलफ्रेड पार्कर के शब्दों में :—

"महावीर के विचार—मानव कर्त्तव्य शास्त्र की उच्चतम अभिव्यक्ति हैं। अहिंसा का महान नियम, सबसे बलवान मौलिक सिद्धान्त है जिसके आधार पर मानव मात्र के कल्याण के लिये एक नैतिक जगत की रचना हो सकती है।"

इतालियन विद्वान डा. अलबर्टी पोगी लिखते हैं: —

"महावीर के उपदेश एक उस विजयी आत्मा के विजय गान के समान हैं जिसने इसी संसार में छुटकारा स्वतंत्रता तथा मुक्ति प्राप्त कर ली है—उनके आदेश हर एक के लिये अनिवार्य नहीं हैं। जो बिना उनको स्वीकार किये भी अनुभव से ज्ञान प्राप्त किये बिना ही उस मार्ग पर चलने लगते हैं, वे भी अपनी आत्मा की एकस्वरिता नष्ट होने से और उसके गन्दला होने के भय से बच जाते हैं।"

डा. फैलिक्स वाल्वो लिखते हैं :—

"बिना किसी शंका या सन्देह के, निश्चय पूर्वक महावीर अपने ही उदाहरण से यह दिखला देते हैं कि मानव के मस्तिष्क को किस प्रकार संयम में लाया जा सकता है और उस पर ऐसा अनुशासन हो सकता है कि एक ही जीवन में उच्चतम बौद्धिक तथा आध्यात्मिक सीमा पर पहुंच जाय।"

उत्तर पुराण (74/2) के अनुसार इनके बाल्यकाल में ही वर्धमान का दर्शन कर उनके तेज को देखकर संजय तथा विजय नामक दो तपस्वियों ने उनका नाम "सन्मति" रखा था। महावीर कलियुग के वरदान हैं। हम उनसे "सन्मति" की याचना करते हैं।

आज मनुष्य पुनः विचार करने लगा है कि आत्मचिन्तन तथा एकान्त में स्वरूप लक्षण कितना आवश्यक है। बिना आत्म-चिन्तन हम असली तत्व तक नहीं पहुँच सकते। स्वामी सत्यानन्द सरस्वती ने सन् 1975 में ही प्रकाशित अपनी पुस्तक में लिखा है कि बिना आत्मचिन्तन के आत्म ज्ञान नहीं हो सकता। पूरी मीमांसा के साथ जैन मत यही कहता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org